होज वाज पापा

–असगर वज़ाहत

अस्पताल की यह ऊँची छत, सफेद दीवारों और लंबी खिड़कियों वाला कमरा कभी–कभी 'किचन' बन जाता है। 'आधे मरीज' यानी पीटर 'चीफ कुक' बन जाते हैं और विस्तार से यह दिखाया और बताया जाता है कि प्रसिद्ध हंगेरियन खाना 'पलाचिंता' कैसे पकाया जाता है। पीटर अंग्रेजी के चंद शब्द जानते हैं। मैं हंगेरियन के चंद शब्द जानता हूँ। लेकिन हम दोनों के हाथ, पैर, आँखें, नाक, कान हैं जिनसे इशारों की एक भाषा 'ईजाद' होती है और संवाद स्थापित ही नहीं होता दौड़ने लगता है। पीटर मुझे यह बताते हैं कि अंडे लिए, तोड़े, फेंटे, उसमें शकर मिलाई, मैदा मिलाया, एक घोल तैयार किया। 'फ्राईपैन' लिया, आग पर रखा, उसमें तेल डाला। तेल के गर्म हो जाने के बाद उसमें एक चमचे से घोल डाला। उसे फैलाया और पराठे जैसा कुछ तैयार किया। फिर उसे बिना चमचे की सहायता के 'फ्राईपैन' पर उछाया, पलटा, दूसरी तरफ से तला और निकाल लिया। पीटर ने मजाक में यह भी बताया था कि उनकी पत्नी जब 'पलाचिंता' बनाने के लिए मैदे का 'पराठा' 'फ्राईपैन' को उछालकर पलटती हैं तो 'पराठा' अक्सर छत में जाकर चिपक जाता है। लेकिन पीटर 'एक्सपर्ट' हैं, उनसे ऐसी गलती नहीं होती।

पीटर का पूरा नाम पीटर मतोक है। उनकी उम्र करीब छियालीस–सैंतालीस साल है। लेकिन देखने में कम ही लगते हैं। वे बुदापैश्त में नहीं रहते। हंगेरी के एक अन्य शहर पॉपा में रहते हैं और वहाँ के डाक्टरों ने इन्हें पेट की किसी बीमारी के कारण राजधानी के अस्पताल में भेजा है। यहाँ के डॉक्टर यह तय नहीं कर पाए हैं कि पीटर का वास्तव में ऑपरेशन किया जाना चाहिए या वे दवाओं से ही ठीक हो सकते हैं।

यानी पीटर के टेस्ट चल रहे हैं। कभी–कभी डॉक्टर उनके चेहरे और शरीर पर तारों का ऐसा जंगल उगा देते हैं कि पीटर बीमार लगने लगते हैं। लेकिन कभी–कभी तार हटा दिए जाते हैं तो पीटर मरीज ही नहीं लगते। यही वजह है कि मैं उन्हें आधे मरीज के नाम से याद रखता हूँ। पीटर 'सर्वे' करने वाले किसी विभाग में काम करते हैं। उनकी एक लड़की है जिसकी शादी होने वाली है। एक लड़का है जो बारहवीं क्लास पास करने वाला है। पीटर की पत्नी एक दफ्तर में काम करती हैं। पीटर कुछ साल पहले किसी अरब देश में काम करते थे। ये सब जानकारियाँ पीटर ने मुझे खुद ही दी थीं। यानी अस्पताल में दाखिल होते ही उनकी मुझसे दोस्ती हो गई थी। पीटर मुझे सीधे–सीधे, दिलचस्प, बातूनी और 'प्रेमी' किस्म के जीव लगे थे। पीटर का नर्सों से अच्छा संवाद था। मेरे ख्याल से कम उम्र नर्सों को वे अच्छी तरह प्रभावित कर दिया करते थे। उन्हें मालूम था कि नर्सों के पास कब थोड़ा–बहुत समय होता है जैसे ग्यारह बजे के बाद और खाने से पहले या दो बजे के बाद और फिर शाम सात बजे के बाद वे किसी–न–किसी बहाने से किसी सुंदर नर्स को कमरे में बुला लाते थे और गप्पशप्प होने लगती थी। जाहिर है वे हंगेरियन में बातचीत करते थे। मैं इस बातचीत में अजीब विचित्र ढंग से भाग लेता था। यानी बात को समझे बिना पीटर और नर्सों की भाव–भंगिमाएँ देखकर मुझे यह तय करना पड़ता था कि अब मैं हँसूँ या मुस्कराऊँ या अफसोस जाहिर करूँ या 'हद हो गई साहब' जैसा भाव चेहरे पर लाऊँ या 'ये तो कमाल हो गया' वाली शक्ल बनाऊँ? इस कोशिश में कभी–कभी नहीं अक्सर मुझसे गलती हो जाया करती थी और में खिसिया जाया करता था। लेकिन ऑपरेशन, तकलीफ, उदासी और एकांत के उस माहौल में नर्सों से बातचीत अच्छी लगती थी या उसकी मौजूदगी ही मजा देती थी। पीटर ने मेरे पास भारतीय संगीत के कैसेट देख लिए थे। अब वे कभी–कभी शाम सात–आठ बजे के बाद किसी नर्स को सितार, शहनाई या सरोद सुनाने बुला लाते थे। बाहर हल्की–हल्की बर्फ गिरती होती थी। कमरे के अंदर संगीत गूँजता था और कुछ समय के लिए पूरी दुनिया सुन्दर हो जाया करती थी।

पीटर के अलावा कमरे में एक मरीज और थे। जो स्वयं डॉक्टर थे और 'एपेण्डिसाइटिस' का ऑपरेशन कराने आये थे। पीटर को जितना बोलने का शौक था इन्हें उतना ही खामोश रहने का शौक था। वे यानी इम्रै अंग्रेजी अधिक जानते थे। मेरे और पीटर के बीच जब कभी संवाद फँस या अड़ जाता था तो वे खींचकर गाड़ी बाहर निकालते थे। लेकिन आमतौर पर वे खामोश रहना पसंद करते थे।

मैं कोई दस दिन पहले अस्पताल में भर्ती हुआ था। मेरा ऑपरेशन होना था।

लेकिन एक जगह पर, एक ही किस्म का ऑपरेशन अगर बार-बार किया जाए तो ऑपरेशन पर से विश्वास उठ जाता है। मेरी यही स्थिति थी। मैं सोचता था, दुनिया के सभी 'डॉक्टर ऑपरेशन' प्रेमी होते हैं और खासतौर पर मुझे देखते ही उनके हाथ 'मचलने' लगते हैं। लेकिन बहुत-से काम 'आस्थाहीनता' की स्थिति में भी किए जाते हैं। कोई दूसरा रास्ता नहीं बचता। तो मैं भर्ती हुआ था। तीसरे दिन ऑपरेशन हुआ था। पर सच बताऊँ ऑपरेशन में उम्मीद के खिलाफ काफी मजा आया था। ये डॉक्टरों, 'टेक्नोलॉजी' का कमाल था या इसका कारण पिछले अनुभव थे, कुछ कह नहीं सकता। लेकिन पूरा ऑपरेशन ख्वाब और हकीकत का एक दिलचस्प टकराव जैसा लगा था। पूरे ऑपरेशन के दौरान मैं होश में था। लेकिन वह होश कभी-कभी बेहोशी या गहरी नींद में बदल जाता था। ऊपर लगी रोशनियाँ कभी-कभी तारों जैसी लगने लगती थीं। डॉक्टर परछाइयों जैसे लगते थे। आवाजें बहुत दूर से आती सरगोशियों जैसी लगती थीं। औजारों की आवाजें कभी 'खट' के साथ कानों से टकराती थीं। और कभी संगीत की लय जैसी तैरती हुई आती थीं। कभी लगता था कि ऑपरेशन बहुत लंबे समय से हो रहा है और फिर लगता कि नहीं, अभी शुरू ही नहीं हुआ है। कुछ सेकेण्ड के लिए पूरी चेतना एक गोता लगा लेती थी और फिर आवाजें और चेहरे धुँधले होकर सामने आते थे। जैसे पानी पर तेज हवा ने लहरें पैदा कर दी हों। एक बहुत सुन्दर महिला डॉक्टर मेरे सिरहाने खड़ी थी। उसका चेहरा कभी-कभी लगता था पूरे दृश्य में 'डिजाल्व' हो रहा है और सिर्फ उसका चेहरा-ही-चेहरा है चारों तरफ बाकी कुछ नहीं है। इसी तरह उसकी आँखें भी विराट रूप धारण कर लेती थीं। कभी यह भी लगता था कि यहाँ जो कुछ हो रहा है उसका मैं एक दर्शक मात्र हूँ।

जिस तरह तूफान गुजर जाने के बाद ही पता चलता है कि कितने मकान ढहे, कितने पेड़ गिरे, उसी तरह ऑपरेशन के बाद मैंने शरीर को 'टटोला' तो पाया कि इतना दर्द है कि बस दर्द-ही-दर्द है। यह हालत धीरे-धीरे कम होती गयी लेकिन ऑपरेशन के बाद मैंने 'रोटी सुगंध' का जो मजा लिया वह जीवन में पहले कभी न लिया था। चार दिन तक मेरा खाना बंद था। गैलरी में जब खाना लाया जाता था तो 'जिम्ले' (एक तरह की पाव रोटी) की खुशबू मेरी नाक में इस तरह बस जाती थी कि निकाले न निकलती थी। चार दिन के बाद वही रोटी जब खाने को मिली तब कहीं जाकर उस सुगंध से पीछा छूटा।

जैसा कि मैं पहले कह चुका हूँ, एक ही जगह पर एक ही ऑपरेशन बार-बार किए जाने के क्रम में यह दूसरा ऑपरेशन था। डॉक्टरों ने कहा था कि इसकी प्रगति

देखकर वे अगला ऑपरेशन करेंगे। फिर अगला और फिर अगला फिर तंग आकर मैंने उसके बारे में सोचना तक छोड़ दिया था।

पीटर मेरे ऑपरेशन के बाद दाखिल हुए थे या कहना चाहिए जब मैं दूसरे ऑपरेशन की प्रतीक्षा कर रहा था तब पीटर आये थे और उनके टेस्ट वगैरा हो रहे थे। आखिरकार उनसे कह दिया गया कि वे दवाओं से ठीक हो सकते हैं। पीटर बहुत खुश हो गए थे। उन्होंने जल्दी-जल्दी सामान बाँधा था और बाकायदा मुझसे गले-वले मिल गए थे। इम्रै तो उससे पहले ही जा चुके थे। इन दोनों के चले जाने के बाद मैं कमरे में अकेला हो गया था, लेकिन अकेले होने का सुख बड़े भयंकर ढंग से टूटा। यानी मुझे सरकारी अस्पताल के कमरे में दो दिन तक अकेले रहने की सजा मिली। यानी तीसरे दिन मेरे कमरे में एक बूढ़ा मरीज आ गया था। देखने से वह करीब सत्तर के आसपास का लगता था। लकिन हो सकता है ज्यादा उम्र रही हो। वह दोहरे बदन का था। उसके बाल बर्फ जैसे सफेद थे। चेहरे का रंग कुछ सुर्ख था। आँखें धुँधली और अंदर को धँसी हुई थीं। जाहिर है कि वह अंग्रेजी नहीं जानता था। वह देखने में खाता-पिता या सम्पन्न भी नहीं लग रहा था। लेकिन सबसे बड़ी मुसीबत यह थी कि उसके आते ही एक अजीब किस्म की तेज बदबू ने कमरे में मुस्तकिल डेरा जैसा जमा लिया था। मैं बूढ़े के आने से परेशान हो गया था। लगा कि शायद मैं नापसंद करता हूँ, यह नहीं चाहता कि वह इस कमरे में रहे। लेकिन जाहिर है कि मैं इस बारे में कुछ न कर सकता था। सिर्फ उसे नापसंद कर सकता था और दिल-ही-दिल में उससे नफरत कर सकता था। उसकी उपेक्षा कर सकता था या उसके वहाँ रहने से लगातार बोर होता रह सकता था। फिर वह भी तय था कि अभी मुझे अस्पताल में कम-से-कम बीस दिन और रहना है। यह बूढ़ा भी ऑपरेशन के लिए ही आया होगा और उसे भी लंबे समय तक रहना होगा। मतलब उसके साथ मुझे बीस दिन गुजारने थे। अगर मैं उससे घृणा करने लगता तो बीस दिन तक घृणित व्यक्ति के साथ रहना बहुत ज्यादा हो जाता। इसलिए मैंने सोचा कम-से-कम उससे घृणा तो नहीं करनी चाहिए। आदमी है, बूढ़ा है, बीमार है, गरीब है, उसे ऐसी बीमारी है कि उसके पास से बदबू आती है तो इसमें उस बेचारे की क्या गलती? तो बहुत सोच-समझकर मैंने तय किया कि बूढ़े के बारे में मेरे विचार खराब नहीं होने चाहिए। जहाँ तक बदबू का सवाल है उसकी आदत पड़ जाएगी या खिड़की खोली जा सकती है, हालाँकि बाहर का तापमान शून्य से चार-पाँच डिग्री नीचे ही रहता था।

उसी दिन शाम को मुझसे मिलने डॉ. मारिया आईं। वे भी बूढ़े को देखकर बहुत खुश नहीं हुई। लेकिन जाहिर है वे भी कुछ नहीं कर सकती थीं। उन्होंने इतना जरूर

किया कि एक खिड़की थोड़ी-सी खोल दी।

''ये कब आए?'' उन्होंने पूछा।

''आज ही।'' मैंने बताया।

''क्या तकलीफ है इन्हें?'' उन्होंने कहा

''मैं नहीं जानता। आप पूछिए। मेरे ख्याल से ये अंग्रेजी नहीं जानते हैं।''

डॉ. मारिया ने बूढ़े सज्जन से हंगेरियन में बातचीत शुरू कर दी। मारिया बुदापैश्त में हिंदी पढ़ती है और हम दोनों 'कुलीग' है। एक ही विभाग में पढ़ाते हैं।

कुछ देर बूढ़े से बातचीत करने के बाद उन्होंने मुझे बताया कि बूढ़े को टट्टी करने की जगह पर कैंसर है और ऑपरेशन के लिए आया है। काफी बड़ा ऑपरेशन होगा। बूढ़ा काफी डरा हुआ है क्योंकि वह चौरासी साल का है और इस उम्र में इतना बड़ा ऑपरेशन खतरनाक हो सकता है। यह सुनकर मुझे बूढ़े से हमदर्दी पैदा हो गई। बेचारा! पता नहीं क्या होगा।

अचानक कमरे में एक पचास साल की औरत आयी। वह कुछ अजीब घबराई और डरी-डरी-सी लग रही थी। उसके कपड़े और रखरखाव वगैरा देख कर यह अनुमान लगाना कठिन नहीं था कि वह बहुत साधारण परिवार की है। वह दरअसल इस बूढ़े की बेटी थी। उससे भी मारिया ने बातचीत की। वह अपने पिता के बारे में बहुत चिंतित लग रही थी। बूढ़े की लड़की से बातचीत करने के बाद मारिया ने मुझे फिर सब-कुछ विस्तार से बताया। हम बातें कर ही रहे थे कि कमरे में हॉयनिका आ गयी। यहाँ की नर्सों में वह एक खुशमिजाज नर्स है। खूबसूरत तो नहीं बस अच्छी है, और युवा है। उसके हाथों में दवाओं की ट्रे थी। आते ही उसने हंगोरियन में एक हाँक लगायी। मैं दस-बारह दिन अस्पताल में रहने के कारण यह समझ गया हूँ कि यह हाँक क्या होती है। सात बजे के करीब रात की ड्यूटी वाली नर्स हर कमरे में जाती है और मरीजों से पूछती है कि क्या उन्हें 'स्लीपिंग पिल' या 'पेन किलर' चाहिए? आज उसने जब यह हाँक लगाई तो मैं समझ गया। लेकिन मारिया ने उसका अनुवाद करना जरूरी समझा और कहा-''पूछ रही हैं पेन किलर या सोने के लिए नींद की गोली चाहिए हो तो बताइये।'' मैंने कहा-''हाँ दो 'पेन किलर' और एक 'स्लीपिंग पिल'।

मारिया अच्छी बेतकल्लुफ दोस्त हैं। वे मजाक करने का कोई मौका नहीं चूकतीं। पता नहीं उनके मन में क्या आयी कि मुस्कराकर बोलीं-''क्या मैं नर्स से यह भी कहूँ कि इन दवाओं के अलावा, रात में ठीक सोने के लिए आपको एक 'पप्पी' भी दे?''

मैं बहुत खुश हो गया-''क्या ये कहा जा सकता है?'' बुरा तो नहीं मानेगी? अपने महान देश में यह कहने का प्रयास वही करेगा जो लात-जूते से अपना इलाज कराना चाहता हो।''

''नहीं, यहाँ कहा जा सकता है।'' वे हँसकर बोलीं।

''तो कहिए।''

उन्होंने नर्स से कहा। वह हँसी, कुछ बोली और इठलाती हुई चली गयी।

''कह रही है मैं पत्नियों के सामने पति को 'पप्पी' नहीं देती। जब मैंने उससे बताया कि मैं पत्नी नहीं हूँ तो बोली कि ठीक है, वह लौटकर आयेगी।''

मैंने मारिया से कहा-''उर्दू के एक प्रसिद्ध हास्य-व्यंग्य कवि इलाहाबादी का शेर है –

''तहज़ीबे ग़रीबी में बोसे तलक है माफ
आगे अगर बढ़े तो शरारत की बात है।''

शेर सुनकर वे दिल खोलकर हँसी और बोलीं-''हाँ, ये सच है कि भारत और यूरोप की नैतिकता में बड़ा फर्क है। लेकिन उसी के साथ-साथ यह भी तय है कि भारतीय इस संबंध में प्रायः बहुत कम जानते हैं। जैसे अकबर इलाहाबादी शायद यह न जानते होंगे कि यूरोप में कुछ 'बोसे' बिल्कुल औपचारिक होते हैं। जिन्हें हम हाथ मिलाने जैसा मानते हैं।''

अब मेरी बारी थी। मैंने कहा-''लेकिन हमारे यहाँ तो औरत से हाथ मिलाना तक एक 'छोटा-मोटा' 'बोसा' समझा जाता है।'' इस पर वे खूब हँसीं।

कमरे के दूसरी तरफ बूढ़े के पास उसकी लड़की बैठी थी। दोनों बातें कर रहे थे। हल्की-हल्की आवाजें हम लोगों तक आ रही थी। मैंने मारिया से पूछा-''वे उधर क्या बातें कर रहे हैं?''

''वह अपनी लड़की से कह रहा है कि मेरी प्यारी बेटी, तुम सिगरेट पीना छोड़ दो। पिछली बीमारी के बाद तुम्हें डॉक्टर ने मना किया था कि सिगरेट न पिया करो लड़की कह रही है कि उसने कम कर दी है अब कुत्ते के बारे में बात हो रही है। बूढ़ा कह रहा है कि उसके अस्पताल में रहते कुत्ते का पूरा ख्याल रखना। अगर कुत्ते का ध्यान नहीं रखा गया तो वह नाराज हो जाएगा अब वह कह रहा है कि दोपहर के खाने में और सुबह के नाश्ते में भी गोश्त था। कम था, लेकिन था अब बाजार में गोश्त की

बढ़ती कीमतों पर बात हो रही है बूढ़ा बहुत नाराज है अब कुछ सुनाई नहीं दे रहा है'' मारिया कुर्सी की पीठ से टिक गयीं।

''बेचारे गरीब लोग मालूम होते हैं।''

''गरीब?''

''हाँ, हमारे यहाँ की गरीबी रेखा के नीचे के लोग।''

कुछ देर बाद 'विजिटर्स' के जाने का वक्त हो गया। बूढ़े की लड़की चली गयी। मारिया भी उठ गयी। गर्म कपड़ों और लोमड़ी के बालों वाली टोपी से अपने को लादकर बोलीं–

''आपकी नर्स तो नहीं आयी?''

''अच्छा ही है जो नहीं आयी।''

''क्यों?''

''इसलिए कि औपचारिक बोसे से काम नहीं चलेगा और अनौपचारिक बोसे के बाद नींद नहीं आयेगी।''

उन्होंने कहा–''कोई-न-कोई समस्या तो रहनी ही चाहिए।''

अस्पताल की रातें बड़ी उबाऊ, नीरस, उकताहट-भरी और बेचैनी करने वाली होती हैं। नींद क्यों आये जब जनाब दिन-भर बिस्तर पर पड़े रहे हों। नींद की गोली खा लें तो उसकी आदत-सी पड़ने लगती है। पढ़ने लगें तो कहाँ तक पढ़ें? सोचने लगें तो कहाँ तक सोचें? लगता है अगर अनंत समय हो तो कोई काम ही नहीं हो सकता। रात में सो पाने, सोचने, पढ़ने आदि-आदि की कोशिश करने के बाद मैं अपने कमरे में आये नये बूढ़े मरीज की तरफ देखने लगा। वह अखबार पढ़ते-पढ़ते सो गया था। जागते हुए भी उसका चेहरा काफी भोला और मासूम लगता है लेकिन सोते में तो बिल्कुल बच्चा लग रहा था। उसके बड़े-बड़े कान हाथी के कान जैसे लग रहे थे। धँसे हुए गालों के ऊपर हड्डियाँ उभर आई थीं। शायद उसने अपने नकली दाँतों का चौखटा निकाल दिया था। उसकी ओर देखकर मेरे मन में तरह-तरह के विचार आने लगे। सबसे प्रबल था कैंसर का बढ़ा हुआ मर्ज, चौरासी साल की उम्र और जिन्दगी का एक ऐसा मोड़ जो अँधेरी गली में जाकर गायब हो जाता है। लगता था बचेगा नहीं जो कुछ मुझे बताया गया था उससे यही लगता था कि ऑपरेशन के बाद बूढ़ा सीधा 'इन्टेन्सिव केयर यूनिट' में ही जाएगा। और फिर पता नहीं कहाँ? मुझे लगने लगा कि उसकी मृत्यु बिल्कुल तय है। उसी तरह जैसे सूरज निकलना तय है। लगा कहीं ऑपरेशन टेबुल पर ही न चल बसे बेचारा पता नहीं, क्यों अचानक वह मुझे हंगेरी के अतीत-सा लगा।

रात ही थी पता नहीं दिन हो गया था। अचानक कमरे की सभी बत्तियाँ जल गयीं और हॉयनिका के अंदर आने की आवाज से मैं उठ गया। उसने मुस्कराहट 'थरमामीटर' हाथ में दिया। इसका मतलब है सुबह का छः बजा है। उसकी मुस्कराहट बड़ी कातिल थी। शायद कल वाली बात उसे याद होगी। मैंने दिल-ही-दिल में कहा, इस तरह मुस्कराने से क्या होगा, वायदा निभाओ तो जानें। उसने बूढ़े आदमी को 'पापा' कहकर जगाया और उन्हें भी 'थरमामीटर' कपड़ा दिया।

संसार के सभी अस्पतालों की तरह इस अस्पताल में भी आप समय का अंदाजा नर्सों के विजिट, डॉक्टरों के आने, नाश्ता दिए जाने, गैलरी की बत्तियाँ बंद किए जाने वगैरा से लगा सकते हैं।

सुबह के काम धीरे-धीरे होने लगे। 'पापा' उठे। उन्होंने अपनी छड़ी उठाई। छड़ी बहुत पुरानी लगती है। उतनी तो नहीं जितने पापा हैं लेकिन फिर भी पुरानी है। छड़ी के हत्थे पर प्लास्टिक की डोरी का एक छल्ला-सा बँधा हुआ था। उन्होंने छल्ले में हाथ डालकर छड़ी पकड़ ली और बाहर निकल गये। शायद बाथरूम गये होंगे। छड़ी के हत्थे से प्लास्टिक की डोरी का छल्ला बाँधने वाला आइडिया मुझे अच्छा लगा। इसका मतलब यह है कि पापा के हाथ से छड़ी कभी गिरी होगी। बस में कभी चढ़ते हुए या ट्राम से उतरते या मैट्रो से निकलते हुए। छड़ी गिरी होगी तो पापा भी गिरे होंगे। पापा गिरे होगें तो उनके पास जो सामान रहा होगा वह भी गिरा होगा। लोगों ने फौरन उनकी मदद की होगी। समान समेटकर उन्हें दिया होगा। उनकी छड़ी उन्हें पकड़ाई होगी। इस तरह से बूढ़ों को मैंने अक्सर बसों, ट्रामों में उतरते-चढ़ते समय गिरते देखा है। पूरा दृश्य आँखों के सामने कौंध गया। इसी तरह की किसी घटना के बाद पापा ने प्लास्टिक की डोरी का छल्ला छड़ी के मुट्ठे से बाँध लिया होगा।

इस शहर में मैंने अक्सर इतने बूढ़े लोगों को आते-जाते देखा है जो ठीक से चल भी नहीं पाते। फिर भी वे थैले लिए हुये बाजारों, बसों में नजर आ जाते हैं। शुरू-शुरू में मैं यह समझ नहीं पाता था कि यदि ये लोग इतने बूढ़े हैं कि चल भी नहीं सकते तो घरों से बाहर ही क्यों निकलते हैं। बाद में मेरी इस जिज्ञासा का समाधान हो गया था। मुझे बताया गया था कि प्रायः बूढ़े अकेले रहते हैं। पेट की आग इन्हें कम-से-कम हफ्ते में एक बार घर से निकलने पर मजबूर कर देती है।

यह आदमी, बूढ़ा आदमी, जिससे मैं नफरत करते-करते बचा, दरअसल बहुत अच्छा है। जैसे-जैसे दिन गुजर रहे हैं, मुझे उसके बारे में अधिक बातें पता चल रही हैं। भाषा के सभी बंधनों के होते हमारे जो रिश्ते बन रहे हैं उनके आधार पर उसे पसंद करने लगा हूँ। हालाँकि हम दोनों आमतौर पर चुप रहते हैं सिवाय इसके कि हर सुबह एक-दूसरे को 'यो रैग्गैल्त' मतलब 'गुड मार्निंग' कहते हैं। दिन में 'यो नापोत किवानोक' यानी 'विश यू गुड डे' कहते हैं। छोटी-मोटी मदद के बाद 'कोसोनोम' धन्यवाद कहते हैं। या धन्यवाद कहे जाने का जवाब 'सीवैशैन' कहकर देते हैं।

मुझे याद है दो दिन पहले जब मैं अपने दूसरे ऑपरेशन के बाद कमरे में लाया गया था और दर्द-निवारक दवाओं का असर खत्म हो गया था तो दर्द इतना हो रहा था कि बकौल फैज अहमद 'फैज' हरे रगे जाँ से उलझ रहा था। डॉक्टर कह रहे थे जितनी स्ट्रांग दर्द-निवारक दवाएँ वे दे चुके हैं उससे अधिक और कुछ नहीं दे सकते। अब तो बस झेलना ही है। मैं झेल रहा था। बिस्तर पर तड़प रहा था। कराह रहा था। आँखें कभी बंद करता था, कभी खोलता था। उसी वक्त एक बार आँखें खुलीं तो मैंने देखा कि पापा हाथ में छड़ी लिए मेरे बेड के पास खड़े हैं। मुझे यह उम्मीद न थी। वे कह कुछ न रहे थे। क्योंकि भाषा की रुकावट थी। लेकिन जाहिर था कि क्यों खड़े हैं। दर्द की वजह से उनका चेहरा धुँधला लग रहा था। उनकी धँसी हुई आँखें बिल्कुल ओझल थीं। लंबे-लंबे कान लटके हुए थे। गर्दन झुकी हुई थी। सिर पर सफेद बाल बेतरतीबी से फैले थे। वे चुपचाप खड़े थे पर मुझे लगा जैसे कह रहे हों, देखो दर्द भी क्या चीज है कोई बाँट नहीं सकता। उसे सब अकेला ही झेलते हैं। पापा को देखते ही मैं अपने दर्द से उनके दर्द की तुलना करने लगा। लगा इस विचार ने ही दर्द-निवारक गोली का काम कर दिया। मैंने सोचा, पापा तुम्हारे ऑपरेशन के बाद मैं शायद तुम्हें इस तरह देख भी न पाऊँगा जिस तरह तुम मुझे देख रहे हो क्योंकि तुम शायद आई०सी०यू० में होंगे या किसी ऐसी जगह जहाँ मैं पहुँच न सकूँगा तुम्हारे इस तरह मुझे देखने का एहसान मेरे ऊपर हमेशा के लिए बाकी रह जाएगा।

ऑपरेशन के एक दिन बाद मैं ठीक होने लगा। दूसरे दिन टहलने लगा। इस दौरान पापा के टेस्ट वगैरा चल रहे थे। हंगेरियन अस्पतालों में कोई हबड़-तबड़ नहीं होती क्योंकि नफा-नुकसान, लेन-देन आदि का कोई चक्कर नहीं है। इसलिए पापा के 'टेस्ट' काफी विस्तार से हो रहे थे। मैं दिन में घबराकर कमरे के चक्कर लगता था और उकताहट दूर करने के लिए या पता नहीं किसलिए दिन में दसियों बार पापा से पूछता था, होज वाज पापा? यानी कैसे हो पापा? पापा मेरे सवाल का हर बार एक ही जवाब

देते थे, 'कोसोनोम योल' यानी 'धन्यवाद, ठीक हूँ।' मैं समझता था कि शायद वे जानते थे कि मैं पता नहीं उनसे क्या-क्या कहना चाहता हूँ लेकिन नहीं कह पाता।

पापा लगभग पूरे दिन बड़े ध्यान से अखबार पढ़ा करते थे। वे हंगेरी का वह अखबार पढ़ते थे जो कम्युनिस्टों का था और अब समाजवादियों का अखबार है। पापा की अखबार में गहरी रुचि मुझे चमत्कृत कर देती थी। ऐसी उम्र में, इतनी खतरनाक बीमारी से जूझते हुए दुनिया में कितने लोगों की रुचि बचती है! या तो लोग चुप हो जाते हैं या रोते रहते हैं। लेकिन पापा के साथ ऐसा न था। एक रात अखबार पढ़ने के बाद वे हाथ बढ़ाकर मेज पर चश्मा रखने लगे तो चश्मा फर्श पर गिर पड़ा। तब मैंने पापा के मुँह से ऐसी आवाज सुनी जो दु:ख व्यक्त करने वाली आवाज थी। मैं तत्काल उठा और पापा का चश्मा उठाया। मैंने देखा, न केवल चश्मा बेहद गंदा था बल्कि उसे धागों से इस तरह बाँधा गया था कि कई जगहों से टूटा लगता था। जैसा भी रहा हो, उसका पापा के लिए बहुत ज्यादा महत्त्व था मैंने चश्मा उनकी तरफ बढ़ाया। उनकी आँखों में कृतज्ञता का स्पष्ट भाव था। चश्मा टूटा नहीं था। अगर टूट जाता तो? बहुत बुरा होता, बहुत ही बुरा।

दो-चार दिन बाद मेरी हालत ये हो गई थी, अपने बेड पर लेटा-लेटा मैं यह इंतजार किया करता था कि पापा की मदद करने का अवसर मिले। वे रात में सोने से पहले लैंप बंद करने के लिए उठते थे। उठने के लिए बड़ी मेहनत करनी पड़ती थी। पहले छड़ी टटोलते थे। फिर छल्ले में हाथ डालते थे। तब खड़े होते थे। बेड का पूरा चक्कर लगाकर दूसरी तरफ आते थे और तब लैम्प का 'स्विच' 'आफ' करते थे। मैं इंतजार करता रहता था। जैसे ही लैम्प बंद करने की जरूरत होती थी मैं जल्दी से उठकर लैम्प 'आफ' कर देता था। पापा 'कोसोनोय' कहते थे। इसी तरह दोपहर के खाने के बाद जैसे ही उनके बर्तन खाली होते थे मैं उठाकर बाहर रख आता था। पढ़ते-पढ़ते कभी उनका अखबार नीचे गिर जाता था तो झपटकर उठा देता था। कभी-कभी ये भी सोचता था कि यार मैं इस अजनबी बूढ़े के लिए यह सब क्यों करता हूँ? मुझे इस सवाल का जवाब नहीं मिलता था।

तीन दिन बाद आज हॉयनिका फिर रात की ड्यूटी पर है। पिछली बार जब वह रात की ड्यूटी पर थी तो उसके केबिन में जाकर मैंने उसे अमजद अली खाँ का सरोद सुनाया था। उसे पसंद आया था। उसने मुझे कॉफी पिलायी थी। इशारों, दो-चार शब्दों, हंगेरियन-अंग्रेजी शब्दकोश की मदद से कुछ बातचीत हुई थी। पता चला था वह विवाहित है। लेकिन उसके विवाहित होने ने मुझे हतोत्साहित नहीं किया था। क्या

विवाह कर लेना किसी लड़की की इतनी बड़ी गलती करार दी जा सकती है कि उससे प्रेम न किया जाए? नहीं, नहीं, कदापि नहीं। शादी कर लेने का मतलब है कि उससे गलती हो गई है। और हर तरह की गलती, भूल को माफ किया जाना चाहिए।

आज मुझे पता चला कि उसकी ड्यूटी है तो रात के दस बज जाने का इंतजार करने लगा। क्योंकि उसके बाद ही उसे कुछ फुर्सत होती थी। इस दौरान मुझसे मिलने एक-दो लोग आये। उनसे बातें होती रहीं। पापा की लड़की आई तो मैं अपने 'विजिटर्स' को लेकर बाहर आ गया। दरअसल अब मैं पापा और उनकी लड़की को बातचीत करने के लिए एकांत देने के पक्ष में हो गया था। कारण यह है कि एक दिन मैंने कनखियों से देखा था कि पापा अपनी लड़की को चुपचाप अस्पताल का खाना दे रहे हैं। लड़की इधर-उधर देखकर खाना अपने बैग में रख रही है। अस्पताल में रोटी, 'चीज' और दीगर चीजें खूब मिलती थीं। उन्हीं में से पापा कुछ बचाकर रख लेते थे और शाम को अपनी लड़की को दे देते थे। इसलिए अब जब उनकी लड़की आती थी तो मैं कमरे से बाहर आ जाता था।

आठ बजे के करीब सब चले गए। मैं कमरे में आकर लेटा रहा। हॉयनिका के बारे में सोचने लगा। मेरे और उसके संबंध मधुर होते जा रहे थे। न केवल उसकी मुस्कराहट में दोस्ती और अपनापन बढ़ रहा था बल्कि कभी-कभी बहुत प्यार से मेरा कंधा भी दबा देती थी। मैं भी अपनी तरफ से यही दिखाता था कि उसे पसंद करता हूँ। एक बार उसे छोटा-मोटा भारतीय उपहार भी दिया था। बहरहाल प्रगति थी और अच्छी प्रगति थी। चूँकि अस्पताल में कोरी कल्पनाएँ करने के लिए काफी समय रहता था इसलिए मैं हॉयनिका के बारे में मधुर, कोमल, छायावादी किस्म की कल्पनाएँ सभी करने लगा था। वह वैसे बहुत सुंदर तो न थी। क्योंकि हंगेरी में महिलाओं की सुन्दरता के मानदंड बहुत ऊँचे हैं। अक्सर सड़क पर टहलते हुए ऐसी लड़कियाँ दिख जाती हैं कि लगता है कि आप स्वर्ग की किसी सड़क पर टहल रहे हैं। पर वह सुन्दर न होते हुए भी अच्छी है। या शायद मुझे लगती हो। शायद इसलिए लगती हो कि मुझे थोड़ी-बहुत घास डाल देती है। बहरहाल कारण चाहे जो भी हो मैं ठीक दस बजे कमरे से बाहर आया। गैलरी की बत्तियाँ बंद हो चुकी थीं। चारों तरफ सन्नाटा था। डॉक्टर अपने कमरों में थके-मारे सो रहे होंगे। हॉयनिका अपने केबिन में बैठी कोई पत्रिका पढ़ रही थी। मुझे देखते ही उसने पत्रिका रख दी। मुझे बैठने के लिए कहा। वह कॉफी पी रही थी। छोटे-से कप में काली कॉफी। मुझे भी दी। मैं अमृत समझकर पीने लगा। इधर-उधर की टूटी-फूटी बातों के बाद मैंने उसे 'वाक्मैन' पर सितार सुनाया। मैं खुद हंगेरियन महिलाओं की

पत्रिका के पन्ने पलटता रहा। कॉफी ने मुँह का मजा चौपट कर दिया था लेकिन क्या कर सकता था। सितार सुनने के बाद उसने 'वाक्मैन' मुझे वापस कर दिया। मैंने मुस्कराकर उसकी तरफ देखा। वह सुन्दर लग रही थी। वहीं नींद में डूबी आँखें, बिखरे हुए बाल, लाल और कुछ मोटे होंठ, शरारत से भरी आँखें। मैंने धीरे से एक हाथ उसके कंधे पर रखा और कुछ आगे बढ़ा। उसकी आँखों में मुस्कराहट नाच उठी। वह कुछ नहीं बोली। बल्कि शायद मौन स्वीकृति। गैलरी का अँधेरा, बाहर लैम्प पोस्टों से आती पीली रोशनी, पेड़ों पर चमकती सफेद बर्फ, दूर से आती अस्पष्ट आवाजें। मैंने अपना चेहरा और आगे बढ़ाया। इतना आगे कि उसका चेहरा 'आउट आफ फोकस' हो गया। उसकी साँसें मुझसे टकराने लगीं। होंठों पर कॉफी, सिगरेट और 'लिपस्टिक' का मिला-जुला स्वाद था। होंठों के अंदर एक-दूसरा स्वाद था जिसमें न तो मिठास थी और कड़वाहट। उसका चेहरा एक ओर झुकता चला गया। मेरे हाथ कंधे से हटकर उसकी पीठ पर आ गए थे। उसके हाथ भी निश्चल नहीं थे। जब मैं उसे देख पाया तो उसके चेहरे पर बड़ा दोस्ताना भाव था। उसने मेरा हाथ पकड़ रखा था। उसकी प्याली में कॉफी बच गई थी। वह उसने मुँह में उड़ेल ली। मैं उठ गया। 'विसोन्तलात आशरा' का एक्सचेंज हुआ। कल मैंने उसे कुछ और नया संगीत सुनाने का वायदा किया। उसने हँसकर स्वीकार किया।

ये कुछ औपचारिक और अनौपचारिक के बीच वाली बात हो गई थी। मैं कमरे में आया तो इतना खुश था कि यह सोचा ही नहीं कि वहाँ पापा लेटे होंगे। पापा बिल्कुल सीधे लेटे थे। उनके सफेद बाल बिखरे हुए थे। उन पर खिड़की से आती चाँदनी पड़ रही थी। पापा का चेहरा फरिश्तों जैसा शांत लग रहा था। बिल्कुल काम, क्रोध, माया, मोह से अछूता। एक अजीब तरह की आध्यात्मिकता छायी हुई थी। ऐसा लगता था जैसे वे अस्पताल के बेड पर नहीं अपने ताबूत में कब्र के अंदर लेटे हों। उनके चेहरे से दैवी ज्योति फूट रही थी। मैं एकटक उन्हें देख रहा था। इससे पहले के दृश्य और इस दृश्य के बीच मैं कोई तारतम्य स्थापित करने की कोशिश कर रहा था। पर मुझे सफलता नहीं मिल रही थी। मुझे लगने लगा कि कमरे में नहीं ठहरा जा सकता। मैं बाहर आ गया। हॉयनिका अपने केबिन में थी पर मैं उधर नहीं गया। दूसरी तरफ मुड़ गया और एक लंबी, विशाल खिड़की से बाहर देखने लगा। पत्तीविहीन लंबे-लंबे पेड़ों की हवा में हिलती शाखाएँ, जमीन पर चमकती बर्फ, लोहे की रेलिंग के आगे फुटपाथ पर दूधिया रोशनी और उसके भी आगे मुख्य सड़क पर ऊँचे-ऊँचे पीली रोशनी फैलाते लैम्प पोस्ट खड़े थे। नीचे से कारों की हेडलाइटें गुजर रही थीं। खिड़की के बाहर का पूरा दृश्य

प्रकाश, अंधकार, गति और स्थिरता का एक कलात्मक कंपोजीशन-सा लग रहा था। तेजी से गुजरती कारें देखकर यह अजीब बेवकूफी का ख्याल आया कि इनमें कौन बैठा होगा? आदमी या औरत? व्यापारी, अपराधी, कर्मचारी, किसान, नेता, अध्यापक, पत्रकार, छात्र, प्रेमी युगल? कौन होगा? क्या सोच रहा होगा? उबाऊ और नीरस जीवन के बारे में या चुटकियों में उड़ा देने वाली जिंदगी के बारे में? फिर अपने पर हँसी आई। सोचा कोई भी हो सकता है, कुछ भी सोच रहा होगा, तुमसे क्या मतलब, जाओ सो जाओ। लेकिन फिर पापा की याद आ गई अंदर जाने में एक अजीब तरह की झिझक पैदा हो गयी।

मुझे अस्पताल में इतने दिन हो गए थे और मैं उस जीवन में इतना रम गया था कि लगा अब घर वापस गया तो अस्पताल 'मिस' करूँगा या शाम घर वापस लौटने के बजाय अस्पताल आ जाया करूँगा। क्योंकि अब मैं वार्ड में शायद सबसे सीनियर मरीज था इसलिए झिझक मिट गयी थी। मैं वार्ड के 'किचन' तक मैं चला जाता था। अपने लिए चाय बना लेता था। गैलरी में खूब टहलता था। नये मरीज़ों से बात करने की कोशिश करता था। पुराने मरीजों को जान-पहचान वाली 'हेलो' करता था। यह देखना भी मजेदार लगता था कि मरीज आते हैं तो उनके चेहरों पर क्या भाव होते हैं। ऑपरेशन के बाद कैसे लगते हैं और ठीक होकर वापस जाते समय उनके चेहरों पर क्या भाव होते हैं। और कुछ नहीं तो सुन्दर नर्सों और लेडी डॉक्टरों की चाल देखता था। उससे भी उकता जाता था तो बाहर गिरती बर्फ में लदे पेड़ देखता था। देखने वाली चीजों में पापा की मेज पर रखा जूस का डिब्बा भी था जिसे मैं कई दिन से उसी तरह रखा देख रहा था जैसा वह था। पापा ने उसे नहीं खोला था। वह जैसे का तैसा कई दिन से वैसा ही रखा था।

हंगेरियन मैं नहीं जानता लेकिन इतना मालूम है कि संसार की किसी भाषा के समाचारपत्र में कई दिन तक 'प्रमुख शीर्षक' एक नहीं हो सकता। पापा जो अखबार तीन दिन से पढ़ रहे थे उसमें मुझे ऐसा लगा। यानी वे तीन दिन से पुराना अखबार पढ़ रहे थे। मुझे अखबार पर गुस्सा आया। यह ताजा अखबार की बदनसीबी थी कि वह पापा तक नहीं पहुँचता। दोपहर जब अखबार बेचने वाला आया और पापा सो रहे थे तो मैंने उससे नया अखबार लेकर पापा की मेज पर रख दिया और पुराना बाहर रख आया। पापा जब उठे तो उन्हें नया अखबार मिला। वे समझ नहीं पाये कि यह कैसे हो गया। मैं बताना भी नहीं चाहता था।

हॉयनिका दो-तीन दिन के 'गैप' के बाद रात की ड्यूटी में ही आती थी। मैं बराबर

उससे मिलता था। लेकिन एक-आध बार भाषा की बाधा के कारण काफी खीज गया और सोचा किसी हंगेरियन मित्र के माध्यम से कभी हॉयनिका से लंबी बातचीत करूँगा। हमारी मित्रता में शब्दों का अभाव अब बुरी तरह खटकने लगा था। और लगता था इस सीमा को तोड़ना जरूरी है। एक दिन शाम जब मारिया आयीं तो मैंने उनसे अपनी समस्या बताई। उन्होंने कहा-''ठीक है, आप द्विभाषिए के माध्यम से प्रेम करना चाहते हैं।''

मैंने कहा-''नहीं, ये बात नहीं है। लेकिन मुझे लगता है कि अब मुझे उसके बारे में कुछ अधिक जानना चाहिए। हो सकता है उसके मन में भी यह हो।'

खैर तय पाया कि शाम के जरूरी काम जब वह निपटा लेगी तो हम उसके केबिन में जाएँगे और मारियाजी के माध्यम से बातचीत होगी। मैं खुश हो गया कि मेरी अमूर्त कल्पनाओं को कुछ ठोस सहारा मिल सकेगा।

हम हॉयनिका के केबिन में गए तो वह पत्रिका पढ़ रही थी और कॉफी पी रही थी। मारिया ने उसे जब मेरे और अपने आने का कारण बताया तो उसके चेहरे पर एक मुस्कराहट फैलती चली गई।

मैंने मारिया से कहा, पहले तो इसे बताइए कि मुझे इस बात का कितना दु:ख है कि मैं हंगेरियन नहीं बोल सकता और उससे बातचीत नहीं कर सकता। यही वजह है कि मैं न उससे वह सब पूछ सका या कह सका जो चाहता था। मेरी बातों पर वह लगातार मुस्कराये जा रही थी।

''ये कहाँ रहती है?''

''बुदापेश्त से दूर एक छोटा-सा शहर है वहाँ रहती है।''

''वहाँ से आने में कितना समय लगता है?''

''तीन घंटे।''

''तीन घंटे आने में और तीन ही जाने में?''

''जी हाँ''

''यहाँ क्यों नहीं रहती है?''

''यहाँ फ्लैटों के किराये इतने ज्यादा हैं कि वह 'एफोर्ड' नहीं कर सकती००० और वहाँ इसने किश्तों पर एक मकान खीरद लिया है।''

''कितनी किश्त देनी पड़ती है?''

''पंद्रह हजार फोरेन्त महीना।''

''और इसे तनख्वाह कितनी मिलती है?''

''सत्रह हजार फोरेन्त...''

''तो कहाँ से खाती-पीती है?''

''इसका पति भी काम करता है।''

''क्या काम करता है?''

''चौकीदार है...किसी फैक्ट्री में!'' सुनकर मुझे लगा कि यह नितांत अन्याय है। सुन्दर महिलाओं के पतियों को उनकी पत्नियों की सुंदरता के आधार पर नौकरी मिलनी चाहिए।

''इसकी एक दो साल की बच्ची भी है।''

''उसे कौन देखता-भालता है?''

''दिन में ये देखती है...कभी-कभी इसकी माँ और रात में इसका पति...यह कह रही है कि उसकी जिन्दगी काफी मुश्किल है। लेकिन घर-परिवार की या निजी-समस्याएँ यह अपने साथ अस्पताल नहीं लाती। यहाँ तो हर मरीज के साथ हँसकर बात करनी पड़ती है।''

यह सुनकर मैं चौंक गया। 'हर मरीज' में तो मैं भी आ गया और 'करनी पड़ती है' का मतलब विवशता है। कुछ क्षण में खामोश रहा।

पता नहीं क्यों मैंने मारिया से कहा-''इससे पूछिए कि इसकी सबसे बड़ी इच्छा क्या है? यह क्या चाहती है कि क्या हो? बड़ी ख्वाहिश, अभिलाषा?''

''ये कह रही है कि इसकी सबसे बड़ी कामना यही है कि हर महीने मकान की किश्तें अदा होती रहें और मकान उसका अपना हो जाए...और यह भी चाहती है कि उसे एक बेटा भी हो। यानी एक बेटी, एक बेटा और अपना मकान।''

''ठीक है, ठीक है...बहुत अच्छा...अब चलें।'' मैं थोड़ा घबराकर बोला। मारिया मुस्कराने लगीं-बहुत अर्थपूर्ण और कुछ-कुछ व्यंग्यात्मक।

कल पापा का ऑपरेशन है। आज वे अच्छी तरह नहाये हैं। अच्छी तरह कंघी की है। मैं आज उनसे आँख मिलाने की हिम्मत नहीं कर सकता। उनकी धुँधली आँखों में देखना आज मुश्किल काम है।

शाम के वक्त कुछ जल्दी ही उनकी लड़की आ गई। आज वह बहुत ज्यादा उदास

लग रही है। दोनों धीमे-धीमे बातें करने लगे। पापा की आवाज में सपाटपन है। वे बोलते-बोलते रुक जाते हैं। कुछ अंतराल पर थोड़ी बातचीत होती है। फिर दोनों सिर्फ एक-दूसरे को देखते हैं। पापा की आँखें गहरी सोच में डूबी हुई हैं। वे छत की तरफ देख रहे हैं। लड़की खिड़की के बाहर देख रही है। बाहर से आवाजें आ रही हैं। पापा ने कुछ कहना शुरू किया। लड़की शायद सुन नहीं पा रही थी। वह और अधिक पास खिसक आयी। उसी वक्त मारिया कमरे में आयी। उनका आना दैवी कृपा जैसा लगा। अभी वे अपना ओवरकोट, भारी-भरकम टोपी उतारकर बैठने भी न पाई थीं कि मैंने फरमाइश कर दी-

''जरा बताइए...क्या बातचीत हो रही है?''

''आप भी कुछ अजीब आदमी है।'' वे हँसकर बोलीं।

''कैसे?''

''पूरे अस्पताल में आपको दो ही लोग पसंद आए हैं। एक पापा दूसरे हॉयनिका। है ना?''

''हाँ, है।''

''और दोनों में अद्‌भुत साम्य है।'' वे हँसी।

''देखिए, बात मत टालिए...पापा कुछ कह रहे हैं जरा सुनिए क्या कह रहे हैं।'' कुछ सुनने के बाद मारिया बोलीं-''पापा कह रहे हैं अब मैं किसी से नहीं डरता। अब मेरा कोई क्या बिगाड़ सकता है। मैं सच बोलूँगा...'' मारिया जी चुप हो गयी। पापा भी चुप हो गये थे। बातचीत का चूँकि कोई ओर-छोर न था इसलिए मैं सोचने लगा ये पापा क्या कह रहे हैं? अब किसी से नहीं डरते०००मतलब पहले किसी से डरते थे। किससे डरते थे? बूढ़ा आदमी, जो हर तरह से अच्छा नागरिक मालूम होता है, किसी से क्यों डरेगा? और अब वह डर नहीं रहा। ये कैसा डर है जो पहले था अब खत्म हो गया? इस पहेली को सुलझाना मेरे बस की बात न थी। मैं पूछ भी नहीं सकता था। किसी के डरने का कारण पूछना वैसे भी असभ्यता है और निश्चित रूप से अगर डर किसी बूढ़े आदमी का हो तो और भी। पापा की दूसरी बात समझ में आती है, अब उनका कोई क्या बिगाड़ सकता है? ये तय है, कि चौरासी वर्षीय कैंसर के मरीज का कोई कुछ नहीं बिगाड़ सकता, क्योंकि यह स्पष्ट है कि अब उसका सामना सीधे मृत्यु से है। और जो कब्र में पैर लटकाये बैठा हो उसे क्या सजा दी जा सकती है? सबसे बड़ी सजा तो मृत्युदण्ड ही है न। सबसे बड़ी इच्छा जीवित रहने की ही है ना? तो जो इनसे ऊपर उठ

गया हो उसका कोई कानून, कोई समाज, कोई व्यवस्था क्या बिगाड़ सकती है? और जब उनका कोई बिगाड़ नहीं सकता तो वे 'सब कुछ' कह सकते हैं। जो महसूस करते हैं बता सकते हैं। हद यह है कि 'सच' तक बोल सकते हैं। सच-एक ऐसा शब्द जो घिसते-पिटते बिल्कुल विपरीत अर्थ देने लगा है। लेकिन चौरासी वर्षीय कैंसर-पीड़ित पापा, आठ घंटे का ऑपरेशन होने से पहले अगर 'सच' शब्द का प्रयोग कर रहे हैं तो वास्तव में उसका वही मतलब है जो है। पर वह सच है क्या जो पापा बोलना चाहते है? और इससे पहले उन्होंने 'सच' क्यों नहीं कह दिया? फैज की पंक्तियाँ आद आ गयी- 'हर्फ़े हक दिल से खटकता है जो काँटे की तरह। आज इजहार करें और खलिश मिट जाये।' तो पापा आज वह सत्य कहना चाहते हैं जो उनके दिल के बोझ को हल्का कर देगा। ठीक है पापा, कहो, जरूर कहो। कभी, कहीं, कोई किसी तरह यह कहे तो कि 'हक' क्या है?

अगले दिन लंबे इंतजार के बाद शाम होते-होते पापा ऑपरेशन थियेटर से वापस लाए गए तो लगा जैसे तारों, नलकियों, बोतलों, बैगों, का एक तिलिस्म है जो उनके चारों ओर लिपट गया है। पता नहीं कितनी तरह की दवाएँ, कितनी जगहों से पापा के शरीर के अंदर जा रही थीं और शरीर से क्या-क्या निकल रहा था जो बेड के नीचे लटकते बैगों में जमा हो रहा था। इन सबमें जगड़े पापा को देखने की हिम्मत नहीं थी। वे बिल्कुल शांत थे, आँखें बंद थीं। शायद बहोश थे। वे सब बातें, वे सब डर, जो मेरे अंदर छिपे बैठे थे, सामने आ गए। पापा०००बेचारे पापा०००नर्सें थोड़ी-थोड़ी देर के बाद आ रही थीं और आवश्यक कार्यवाही कर हरी थीं। कुछ देर बाद उनकी लड़की आई। नर्स से बातचीत करके चली गयी। रात में मैं कई बार उठा लेकिन पापा की हालत में कोई बदलाव नहीं देखा। न हिल रहे थे, न डुल रहे थे, न खर्राटे ले रहे थे। बस ग्लूकोस की टपकती बूँदें ही बताती थीं कि सब कुछ ठीक है। रात में कई बार नर्स आयी, उसने बोतलें बदली, थैलियाँ बदलीं और पापा का टेम्प्रेचर वगैरा लिया और चली गयी।

रात में मुझे तरह-तरह के ख्याल आते रहे। कुछ बड़े भयानक ख्याल थे। जैसे अचानक नर्स घबराकर खट-खट करती हुई बाहर जायेगी। दूसरी ही क्षण कई डॉक्टर आ जायेंगे। पापा को बाहर निकाला जायेगा और फिर कुछ देर बाद दो-तीन लोगों के साथ पापा की लड़की आयेगी। वह सिसक रही होगी। उसकी आँखें लाल होंगी। वह धीरे-धीरे पापा का सामान समेटेगी। पापा का चश्मा, उनकी डायरी, उनका कलम, उनके कपड़े, जूते, तौलिया, साबुन और वह छोटी-सी गठरी जिसमें से सख्त बदबू आती है। मेज पर रखा जूस का वह डिब्बा उठायेगी जो अब तक बंद है। दराज खोलेगी

तो उसमें से कुछ खाने का सामान, छुरी-काँटा और चम्मच निकलेगा। इस सबके दौरान वह रोती रहेगी। साथ वाले लोग सान्त्वना के एक-आध शब्द कहेंगे। फिर सब सामान समेटकर वह पापा के बेड पर एक नजर डालेगी और चीखकर रो पड़ेगी। उसी समय बड़ी नर्स आयेगी और उसे कंध से पकड़कर बहुत-धीरे-धीरे कुछ समझाती हुई बाहर ले जायेगी। कमरे से पापा के वहाँ रहने के सारे सबूत मिट जायेंगे। थोड़ी देर के लिए खिड़की खोली जायेगी तो ताजी हवा अंदर आयेगी। छोटी नर्सें खटाखट बड़े कवर, तकिये, गिलाफ और चादरें बदल देंगी। लोहे के सफेद बेड को साफ कर देगी और बाहर निकल जायेंगी। अब वहाँ सिर्फ मैं बचूँगा। और अगर मैं किसी को बताना भी चाहूँगा कि बेड पर पापा ने जिन्दगी के सबसे सच्चे क्षण गुजारे हैं तो किसी को यकीन नहीं आएगा।

दो दिन तक पापा की हालत बिल्कुल एक-सी रही। उसके बाद मेरा अपना छोटा वाला ऑपरेशन हुआ और मैं पड़ गया। एक-आध दिन के बाद करीब शाम के वक्त जब मेरे पास मारिया और पापा के पास उनकी लड़की बैठे थे तो सीनियर नर्स आयी और बोली कि पापा को बैठाया जायेगा। उसने पापा का बेड ऊँचा किया। पापा दर्द से चिल्लाने लगे। फिर बेड नीचा कर दिया गया। लेकिन नर्स ने कहा कि इस तरह काम नहीं चलेगा। आखिर दोनों के बीच फैसला हुआ कि जितना ऊँचा पहले किया गया था उसका आधा ऊँचा कर दिया जाये। उस दिन मारिया ने बताया कि पापा कह रहे हैं कि "भगवान की कृपा से अब मैं डेढ़-दो साल और जी जाऊँगा।" मारियाजी को इस वाक्य पर बड़ी हँसी आयी थी। उन्होंने कहा था कि भगवान पर ऐसा विश्वास हो तो फिर क्या समस्या है। पापा अपनी लड़की को यह भी बता रहे थे, उनका खाना बंद है और वे सूखकर काँटा हो गये हैं। पापा सिर्फ 'लिक्विड डाइट' पर थे। जूस का सौभाग्यशाली डिब्बा खुल गया था। उसके अलावा पापा को कॉफी और सूप मिलता था।

एक-आध दिन बाद मैं बाथरूम से कमरे में आया तो एक अद्‌भुत दृश्य देखा। बेड का सहारा लिए पापा खड़े थे। उनके सफेद बाल बिखरे थे। सफेद लम्बा-सा अस्पताल का चोगा लटक रहा था। हाथ और पैर बिल्कुल काले हो गए थे। शरीर के चारों ओर कुछ नलकियाँ और बैग झूल रहे थे। उनके चेहरे पर कोई भाव न थे। अपने खड़े रहने पर वे इतना ध्यान दे रहे थे कि कुछ व्यक्त करने का उनके पास समय ही न था। मैंने सोचा कि उनके खड़ा होने पर बधाई दूँ या कम-से-कम हंगोरियन शब्द 'यो' 'यो' कहूँ जिसका मतलब 'अच्छा', 'सुन्दर' आदि है। लेकिन फिर लगा कि कहीं मैं

पापा को 'डिस्टर्ब' न कर दूँ। उसी तरह, जैसे बच्चे जब पहली-पहली बार खड़े होते हैं और उन्हें देखकर माता-पिता हँस देते हैं तो वे धप्प से बैठ जाते हैं। पापा खड़े रहे। उन्होंने एक बार गर्दन उठाकर सामने देखा। एक बार गर्दन झुकाकर नीचे देखा। बेड को पकड़े-पकड़े एक कदम आगे बढ़ाया, उसके बाद वे रुक गये। पापा को खड़े देखकर यह लगा कि केवल पापा ही नहीं खड़े हैं। उनके साथ न जाने क्या-क्या खड़ा हो गया है। मैं एकटक भी नहीं देख सकता था। डर था कहीं पापा मुझे देखता हुआ न देख लें।

मेरे अस्पताल से निकाल दिये जाने के दिन करीब आ रहे थे। मैं जानता था कि जितना यहाँ आराम है, उतना कहीं और न मिलेगा। जितनी यहाँ शांति है उतनी शायद शांतिनिकेतन में भी न होगी। यहाँ समय अपने वश में लगता है लेकिन बाहर मैं समय के वश में रहता हूँ। बहरहाल अस्पताल से बाहर जाने का विचार इस माने में तो अच्छा था कि ठीक हो गया हूँ लेकिन इस अर्थ में अच्छा नहीं था कि बाहर अधिक खुश रहूँगा। अस्पताल के जीवन का मैं इतना अभ्यस्त हो गया था या वह मुझे इतना पसंद आया था कि बाहर निकाल दिये जाने का विचार एक साथ खुशी और अफसोस की भावनाओं का संचार कर रहा था। हॉयनिका ने भी एक बार मजाक में कहा था कि मेरे अस्पताल से चले जाने के बाद मैं उसे बहुत याद आऊँगा। मैंने कहा था कि अस्पताल के बाहर भी कहीं मिला जा सकता है। लेकिन फिर खुद अपने प्रस्ताव पर शर्मिन्दा हो गया था-दो-तीन घंटे की यात्रा और पूरी रात अस्पताल की ड्यूटी के बाद सुबह सात बजे तीन घंटे की यात्रा करने के लिए निकलने वाले से 'कहीं बाहर' मिलने की बात करना अपराध लगा।

पापा को खाना दिया जाने लगा था। अब वे अपनी लड़की से यह शिकायत करते थे कि खाना कम दिया जाता है। कई दिन भूखे रहने के बाद उनकी खुराक शायद बढ़ गई थी। लेकिन इस संबंध में कुछ नहीं किया जा सकता था। अस्पताल वाले नियमित मात्रा में ही खाना देते थे। पापा अब चूँकि थैलियाँ लटकाए चलने-फिरने लगे थे इसलिए भी भूख खुल गयी होगी। ऑपरेशन के बाद पापा के पास से वह दुर्गंध आना बंद हो गयी थी, लेकिन कभी-कभी वह 'ट्यूब' या थैली खुल जाती थी जिसमें टट्टी आती थी। उसके खुलते ही भयानक दुर्गंध कमरे में भर जाती थी और बाहर निकलने के अलावा कोई रास्ता न बचता था। एक दिन यह हुआ कि पापा की टट्टी वाली थैली खुल गयी। उन्होंने उसे स्वयं बंद करने की कोशिश की तो वह और ज्यादा खुल गयी। मैं कमरे से बाहर चला गया। कुछ देर बाद कमरे में आया तो देखा पापा खड़े हुए थैलियों से जूझ रहे हैं। टट्टी की थैली से गंदगी निकलकर बिस्तर और फर्श पर फैल

गयी है। पापा का चोगा उतर गया है। व बिल्कुल नंगे खड़े हैं। सफेद बाल बिखरे हुए हैं। पापा थैलियों को लगाने की कोशिश कर रहे थे। नर्स को नहीं बुला रहे। यह देखकर अच्छा लगा। पापा अब ये काम अपने आप कर सकते हैं। लेकिन मैंने नर्सों से जाकर कहा। वे आयी। पापा और कमरे की पूरी सफाई हो गयी। पापा नए चोगे में लेट गये। चश्मा लगाकर अखबार ले लिया। खिड़की खोल दी गयी। मैं भी लेट गया, अमजद अली खाँ को सुनने लगा।

पापा कुर्सी पर भी अक्सर बैठ जाते थे। एक दिन मैंने देखा कि पापा चश्मा लगाये, गंभीर मुद्रा में, हाथ में कलम लिए कुर्सी पर बैठे हैं। सामने मेज पर कुछ कागज रखे थे। मैं समझा शायद कुछ हिसाब लिख रहे हैं, लेकिन कलम चलने की रफ्तार से कुछ समझ में नहीं आया। न तो वे पत्र लिख रहे थे, न डायरी लिख रहे थे, न हिसाब कर रहे थे। वे कलम को हाथ में पकड़े गंभीरता से कागज की तरफ देखकर देर तक कुछ सोचते थे और फिर झिझकते हुए कलम उठाते थे। एक-आध शब्द लिखते थे और फिर कलम रुक जाता था। एकाग्रता बहुत गहरी थी। माथे पर लकीरें पड़ी हुई थीं। चिंता में डूबे थे जैसे कोई ऐसा काम कर रहे हों जो उनके लिए जरूरी से भी ज्यादा जरूरी हो। यह जानने के लिए ऐसा क्या हो सकता है, मैं उठा और टहलने के बहाने पापा के पीछे पहुँच गया। अब मैं देख सकता था कि वे क्या कर रहे हैं। मैंने देखा पापा यूरोप की सबसे बड़ी लाटरी 'लोटोटोटो' के नम्बर भर रहे हैं वाह पापा वाह! तो ये ठाठ है। इसका मतलब है अब तुम बिल्कुल 'चंगे' हो गए हो। लाटरी वह भी यूरोप की सबसे बड़ी लाटरी॰॰॰सौ मिलियन फोरेंत। भई वाह॰॰॰क्या करोगे इतना पैसा पापा? चर्च बनवाओगे? उस भगवान का घर जिसकी कृपा से तुम साल-डेढ़ साल और जीओगे या अपने लिए शानदार कोठी बनवाओगे? या हर साल जाड़ों में फ्रांस के समुद्र-तट पर जाया करोगे? समुद्र में नहाओगे? खूबसूरत फ्रांसीसी लड़कियों के साथ 'बीच' पर लेटकर अपना रंग सुनहरा करोगे? या ये सौ मिलियन डालर तुम अपनी लड़की को दे दोगे? या महँगी-महँगी गाड़ियाँ खरीदोगे। जायदाद बनाओगे या कोई सरकारी फैक्टरी खरीद लोगे जो आजकल धड़ाधड़ बिक रही हैं? क्या करोगे पापा? या उनके लिए कुछ करोगे जो रोज गोश्त नहीं खा पाते? क्या करोगे सौ मिलियन फोरेंत? ये बताओ कि अगर ये लाटरी तुम्हारे नाम निकल आयी तो तुम्हें यह सूचना देने का जोखिम कौन उठाएगा? यह सुनकर तुम्हें क्या लगेगा कि मरने से डेढ़-दो साल पहले तुम करोड़पति हो गए हो? फिर तुम्हारे लिए एक मिनट एक महीने जैसा कीमती होगा। तब तुम अपना एक मिनट कितनी होशियारी, चतुराई, सतर्कता, समझदारी से गुजारोगे? कुछ भी कहो

पापा, सौ मिलियन मिलने के बाद तुम्हारी परेशानियाँ बढ़ ही जायेंगी। लेकिन यह बड़ी बात है कि तुम्हारे मन में अब भी यह इच्छा बची हुई है। कितने ऐसे लोग मिलेंगे जो तुम्हारी उम्र तक पहुँचते-पहुँचते इच्छाओं से खाली हो जाते हैं। तुम्हारे पास सौ मिलियन फोरेन्त खर्च करने की योजना भी होगी। क्योंकि हर लाटरी खेलने वाले के पास इस प्रकार की योजना होती है। तुम्हारे पास योजना है तो तुम सोचते हो अपने बारे में, परिवार के बारे में, लोगों के बारे में। यह बहुत है पापा, बहुत है। अच्छा पापा, एक बात पूछूँ? कान में ताकि कोई और सुन न लें। ये बताओ कि यह इच्छा-मतलब लाटरी निकल आने की इच्छा कब से है तुम्हारे मन में? क्या मंदी के दिनों से है जब तुम जवान और बेरोजगार थे? या उस समय से है जब जर्मन और रूसी गोलियों से बचने तुम किसी अँधेरे तहखाने में छिपे हुए थे? क्या यह इच्छा उस समय भी थी तुम्हारे मन में जब तुम विजयी लाल सेना का स्वागत कर रहे थे? बाद के दिनों में क्रांति के गीत गाते हुए या सहकारी आंदोलन में रात-दिन भिड़े रहने के बाद भी तुम यह सपना देखने के लिए थोड़ा-सा समय निकाल लेते थे? माफ करना पापा, मैं ये सब इसलिए पूछ रहा हूँ कि ऐसे सपने देखना कोई बुढ़ापे में शुरू नहीं करता है न?

असगर वज़ाहत

जन्म	:	5 जुलाई, 1946, फतेहपुर (उत्तर प्रदेश)
प्रकाशन	:	मैं हिन्दू हूँ, दिल्ली पहुँचना है, स्वीमिंग पुल, सब कहा कुछ (कहानी संग्रह)सात आसमान, कैसी आगी लगाई, रात में जागने वाले, पहर-दोपहर, मन माटी, चहारदर, फिरंगी लौट आए, जिन्ना की आवाज, वीरगति, समिधा (उपन्यास) जिन लाहौर नहीं देख्या (नाटक)
सम्मान	:	साहित्यकार सम्मान (हिन्दी अकादमी), इंदुशर्मा कथा सम्मान, कथाक्रम सम्मान

अपराध

—संजीव

रात के खौफनाक अँधेरे को चीरते हुए मेरी ट्रेन भागती जा रही है। एक अँधेरी सुरंग है कि मेरे समूचे अस्तित्व को निगलती जा रही है। यूँ मैंने सारी खिड़कियाँ बंद कर ली हैं, फिर भी एक शोर है कि जिस्म के पुर्जे-पुर्जे धमक रहे हैं, यादों का एक काफिला है कि मेरे मरु-मन का जर्रा-जर्रा कुनमुनाकर ताकने लगता है।

जेहन में धीरे-धीरे आकार ले रही है एक हवेली...कस्बे में व्यवस्था और सत्ता की प्रतीक मेरी हवेली-'कंचनजंघा'। धीरे-धीरे कई चेहरे उभर रहे हैं, प्रभुसत्ता रोबीले सेशन जज-पापा, एस.पी. - बड़े भैया, जिलाधीश-छोटे भैया, गृह विभाग के सचिव-जीजा, उनके प्रभाव का एहसास कराती हुई गवीली बहन, सबके अपने-अपने पोस्टेड जिलों में चले जाने पर उदास राजमाता की तरह मम्मी, न जाने कितने मंत्रियों, अफसरों और ऊँचे ओहदे वालों के गड्डमड्ड चेहरे! एक अजीब-सा खिंचाव, एक अजीब-सा खौफ समाया रहता है यहाँ के लोगों में कंचनजंघा के प्रति। मैंने बचपन से ही इस खिंचाव का अनुभव किया है। कपड़े की बॉल और पीढ़े का बल्ला बनाकर खेले जा रहे क्रिकेट या कॉच की गोलियों जैसे खेल, गवर्नेस, खानसामा, दाइयाँ, ट्यूटर्स, सेंट-विसेंट और सेंट पैट्रिक्स स्कूलों में पलते मेरे वजूद को देखकर थम जाते और वे मुझे टुकुर-टुकुर ताकने लगते। ऐसा लगता, मुझे मेरी इच्छा के विरुद्ध कुछ इतर, कुछ विशिष्ट बनाने का षड्यंत्र चल रहा है और एक अस्वीकार समाता रहा अवचेतन में। पापा कहते, 'जाने किस धातु का बना है!' पूरे परिवार में 'सिद्धार्थ' की उपाधि से मैं आभूषित था।

'खैर, एक लड़का ऐसा ही सही!' और माँ सबकी चिंताओं पर स्टॉप लगा